

अंडमान निकोबार की जनजातियाँ और उनकी संस्कृति

डॉ. महेन्द्र कुमार वर्मा

अतिथि प्रवक्ता, हिन्दी विभाग

जवाहरलाल नेहरू राजकीय महाविद्यालय

श्रीविजयापुरम, अंडमान निकोबार

अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह भारतीय उपमहाद्वीप के सुदूर दक्षिण-पूर्व में स्थित एक समुद्री भूभाग है, जो बंगाल की खाड़ी और अंडमान सागर के मध्य विस्तृत है। जहाँ निकोबार द्वीप समूह अपेक्षाकृत अधिक जनसंख्या और आधुनिक संपर्कों से जुड़ा हुआ है, वहीं अंडमान द्वीपों में कुछ ऐसी प्राचीन जनजातियाँ निवास करती हैं, जो आज भी अपनी परंपरागत जीवनशैली को संरक्षित रखते हुए आधुनिकता से दूर जीवन यापन करती हैं। भारत के अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह की प्राकृतिक सुंदरता और जैवविविधता जितनी प्रसिद्ध है, उतनी ही समृद्ध है यहाँ की जनजातीय संस्कृति। विशेष रूप से अंडमान द्वीपसमूह में निवास करने वाली जनजातियाँ अत्यंत प्राचीन, विशिष्ट एवं अनूठी हैं। ये जनजातियाँ आज भी अपने पारंपरिक जीवन के साथ प्रकृति के अत्यधिक निकट रह रही हैं। इनकी जीवनशैली, संस्कृति, भाषा और सामाजिक संरचना भारत की जनजातीय विरासत का एक अमूल्य अंग है। अंडमान की जनजातियाँ मानव सभ्यता की आदिम शाखाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। ऐसा अनुमान है कि ये जनजातियाँ लगभग 60,000 वर्ष पूर्व अफ्रीका से प्रवाहित होकर यहाँ पहुँचीं और तब से ही इस भूभाग में निवास कर रही हैं।

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन काल में इन जनजातियों के प्रति दृष्टिकोण अत्यंत असंवेदनशील रहा। विशेषकर ग्रेट अंडमानी जनजाति को जबरन बाहर लाकर उपनिवेशों में काम कराया गया, जिससे उनकी जनसंख्या में भारी गिरावट आई। अंडमान में निम्नलिखित पाँच प्रमुख जनजातियाँ पाई जाती हैं- ग्रेट अंडमानी जनजाति, ओंगी जनजाति, जारवा जनजाति, सेन्टिनली जनजाति, शोम्पेन जनजाति और निकोबारी जनजातियाँ।

'ग्रेट अंडमानी जनजाति' अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की एक प्रमुख आदिवासी जनजाति है। यह जनजाति कभी अंडमान द्वीपों में फैली हुई कई उपजनजातियों का समूह थी, लेकिन अब इनकी संख्या बहुत सीमित रह गई है। वर्तमान में यह जनजाति मुख्यतः पोर्ट ब्लेयर के पास स्थित स्ट्रेट द्वीप (Strait Island) में निवास करती है। जो पारंपरिक रूप से ग्रेट अंडमानी लोग जंगलों में अस्थायी झोपड़ियाँ बनाते थे जिन्हें 'चौला' कहा जाता था। झोपड़ियाँ बांस, लकड़ी और पत्तों से बनाई जाती थीं। ये मौसम के अनुसार अस्थायी या स्थायी हो सकती थीं। अब ये लोग सरकार द्वारा बनाए गए पक्के मकानों में रहते हैं, विशेष रूप से स्ट्रेट द्वीप पर। पारंपरिक रूप से पुरुष और महिलाएँ बहुत ही सीमित वस्त्र पहनते थे, जैसे पुरुष कमर में पेड़ की छाल या पत्तों से बना वस्त्र पहनते थे और महिलाएँ कमर से नीचे तक ढकती थीं। आधुनिक समय में सरकार की पहल के बाद अब ये लोग सामान्य कपड़े पहनते हैं। इनके पारंपरिक आहार में शिकार, मछली, जंगल के फल, जड़ें और शहद प्रमुख रूप से शामिल हैं। इनको कछुए, सूर, मछली, केकड़ा, नारियल, और विभिन्न प्रकार के कंद-मूल खाना ही मुख्य रूप से पसंद था किन्तु अब ये चावल, दाल और अन्य सरकारी आपूर्ति पर भी निर्भर हैं। भाषाई आधार पर देखा जाये तो ग्रेट अंडमानी जनजाति की कई भाषाएँ थीं, जैसे जेरु, बो,

आदि, लेकिन अब इनमें से अधिकांश विलुप्त हो चुकी हैं। अब ये लोग मिश्रित 'ग्रेट अंडमानी हिंदी' बोलते हैं जो उनकी पारंपरिक भाषाओं और हिंदी का मिश्रण है। इनका धार्मिक कर्म प्रकृति पूजा था यह लोग प्रकृति-पूजक होते थे। पेड़, जानवर, सूरज, चाँद आदि को देवता मानते थे और आत्मा, पूर्वजों एवं प्राकृतिक शक्तियों में आस्था रखते थे। किन्तु अब कुछ लोग ईसाई और हिन्दू धर्म को मानने लगे हैं लेकिन इसके साथ ही पारंपरिक आस्था अब भी इनमें शेष है। त्यौहार और उत्सव की बात करें तो शिकार की सफलता, वर्षा और फसल के समय छोटे स्तर पर उत्सव मनाते थे। लेकिन अब दीवाली, होली आदि भी इनके त्यौहारों में शामिल हैं किन्तु सीमित रूप में। संगीत और नृत्य इनकी संस्कृति का अहम हिस्सा था।

ये लकड़ी के वाद्य यंत्र बजाते थे। इनके पारंपरिक गीतों में प्रकृति, शिकार, युद्ध और प्रेम की बातें होती थीं। इनको अपने शरीर पर विभिन्न प्रकार के चित्र बनाना, टैटू गुदवाना और प्राकृतिक रंगों से सज्जा करना पसंद था। किन्तु अब यह परंपरा लगभग समाप्त हो रही है। 19वीं सदी में ब्रिटिशों के आगमन के बाद इनकी संख्या में भारी गिरावट आ गई। इसके अलावा रोग, विस्थापन और सांस्कृतिक परिवर्तन भी इनकी जनसंख्या में गिरावट की मुख्य वजह रही है। अब इनकी संख्या बहुत कम रह गई है और इसी वजह से भारत सरकार इन्हें विशेष सुरक्षा, स्वास्थ्य सेवाएँ, शिक्षा और आवास प्रदान कर रही है। 'ओंगी जनजाति' भी यहाँ की एक प्रमुख जनजाति के रूप में गिनी जाती है। यह जनजाति अंडमान के 'लिटिल अंडमान' द्वीप पर निवास करती है और भारत की उन कुछ आदिवासी जातियों में शामिल है जिनका जीवन आज भी प्रकृति से गहरे जुड़ा हुआ है। आधुनिक सभ्यता के प्रभावों के बावजूद ओंगी जनजाति ने अपने पारंपरिक रहन-सहन और सांस्कृतिक जीवन को काफी हद तक संरक्षित रखा है। ओंगी जनजाति के लोग लिटिल अंडमान के जंगलों और तटवर्ती क्षेत्रों में लकड़ी, ताड़ के पत्तों और बाँस से बनी झोपड़ियों में रहते हैं। इन झोपड़ियों को स्थानीय भाषा में 'बाहै' कहा जाता है। ये गोल या अर्धगोलाकार आकार की होती हैं और इनका निर्माण जलवायु तथा मौसम को ध्यान में रखकर किया जाता है। ओंगी लोग पारंपरिक रूप से बहुत ही कम वस्त्र पहनते हैं। पुरुष कमर में कपड़ा या छाल लपेटते हैं, जबकि महिलाएँ शरीर को ताड़ या केले के पत्तों से ढकती हैं। शरीर पर गोदना (टैटू) और प्राकृतिक रंगों से सज्जा करना इनकी पारंपरिक पहचान है। वे बालों में फूल, पत्तियाँ और सीपियाँ सजाते हैं। ओंगी जनजाति मुख्यतः शिकारी और खाद्य-संग्राहक जीवनशैली का पालन करते हैं। इनका आहार जंगल से प्राप्त कंद-मूल, फल, शहद, केकड़े, मछली, कछुए आदि पर आधारित होता है। वे समुद्री तटों से मछली पकड़ते हैं और छोटे जीवों का शिकार करते हैं। अब सरकारी सहायता से उन्हें चावल, दाल और अन्य खाद्य सामग्री भी प्राप्त होती है। ओंगी जनजाति की अपनी अलग भाषा है जिसे ओंगी भाषा कहा जाता है। यह अंडमानी भाषा-परिवार से संबंधित है और अत्यंत सीमित लोगों

द्वारा बोली जाती है। अब बहुत से ओंगी लोग अंडमानी हिंदी भी समझने लगे हैं, परंतु उनकी मातृभाषा विलुप्ति के कगार पर है। ओंगी समाज सामूहिकता और सहयोग पर आधारित है। पुरुष शिकार करते हैं जबकि महिलाएँ भोजन संग्रह और बच्चों की देखभाल करती हैं। विवाह प्रथा सरल है और समाज में किसी प्रकार का जातिगत भेदभाव या संपत्ति का संचय नहीं होता। समाज में निर्णय सामूहिक रूप से लिए जाते हैं। ओंगी लोग प्रकृति-पूजक हैं। उनका विश्वास है कि पेड़-पौधे, जानवर, आकाश, जल आदि सभी में आत्माएँ निवास करती हैं। वे किसी विशेष देवता की पूजा नहीं करते, परंतु प्राकृतिक शक्तियों के प्रति आदरभाव रखते हैं। मृतकों की आत्मा को भी सम्मानपूर्वक याद किया जाता है। ओंगी जनजाति विशेष अवसरों पर पारंपरिक गीतों और नृत्यों के माध्यम से अपनी खुशी प्रकट करते हैं। जैसे शिकार में सफलता, बच्चों का जन्म या प्रकृति के साथ सामंजस्य के अवसर पर सामूहिक नृत्य होता है।

यह नृत्य गोल घेरे में होता है, जिसमें पुरुष और महिलाएँ एक साथ भाग लेते हैं। ओंगी जनजाति की कला उनके दैनिक जीवन और परिवेश से जुड़ी होती है। वे प्राकृतिक रंगों का उपयोग कर शरीर पर चित्र बनाते हैं और मिट्टी, लकड़ी तथा सीपियों से अलंकृत वस्तुएँ बनाते हैं। ये कलाकृतियाँ न केवल सजावट के लिए होती हैं बल्कि सांस्कृतिक प्रतीक भी होती हैं। ओंगी जनजाति की जनसंख्या तेजी से घट रही है। जहाँ एक समय इनकी संख्या सैकड़ों में थी, अब यह घटकर लगभग 100 से भी कम रह गई है। जिसकी मुख्य वजह बीमारियाँ, बाहरी प्रभाव और जीवनशैली में आए अचानक परिवर्तनों को माना जा सकता है। भारत सरकार ने इन्हें विशेष संरक्षित जनजाति की श्रेणी में रखा है और इनके लिए 'दुगोंग क्रीक' में एक सुरक्षित बस्ती बनाई है। सरकार द्वारा इन्हें भोजन, दवा, शिक्षा, और आवास की सुविधाएँ दी जाती हैं, किंतु इसके बावजूद उनकी सांस्कृतिक पहचान पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं।

'जारवा जनजाति' अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की एक प्रमुख आदिवासी जनजाति है, जो मुख्यतः दक्षिण और मध्य अंडमान द्वीपों के घने वनों में निवास करती है। यह जनजाति भारत की सबसे प्राचीन और पथक समुदायों में से एक मानी जाती है। जिसकी जनसंख्या बहुत सीमित है और जो आधुनिक सभ्यता से काफी हद तक कटी हुई जीवनशैली अपनाए हुए है। जारवा लोग स्थायी मकानों में नहीं रहते। ये झोपड़ियाँ या अस्थायी आश्रय बनाते हैं, जिन्हें ये 'चाड़ा' कहते हैं। बांस, पत्ते और लकड़ी का प्रयोग कर जंगल के भीतर या समुद्र किनारे झोपड़ी बनाकर रहते हैं। इनका खान-पान पूरी तरह प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर है। ये शिकारी और संग्रहकर्ता होते हैं। इनका मुख्य भोजन- जंगली फल, शहद, मछली, सूअर, कछुआ, और अन्य जंगली जानवर साथ ही समुद्री शंख, केकड़े और कंद-मूल इनके मुख्य भोजन में सम्मिलित है। जारवा पुरुष पारंपरिक धनुष-बाण से शिकार करते हैं, जबकि महिलाएँ मछली पकड़ने और भोजन संग्रह में मदद करती हैं। जारवा जनजाति वस्त्र बहुत कम पहनते हैं। पुरुष और महिलाएँ कमर के नीचे पेड़ की छाल या पत्तों का उपयोग करते हैं। आभूषणों में ये लोग सीपियों, हड्डियों और लकड़ी से बने हार, कंगन, और बोजबंद पहनते हैं। ये लोग आधुनिक चिकित्सा पद्धति से अनभिज्ञ होते हैं। बीमारियों का इलाज जड़ी-बटियों और पारंपरिक तरीकों से करते हैं। इनके लिए सबसे बड़ी चुनौती बाहरी संक्रमण है, जिनसे इनका शरीर प्रतिरोध नहीं कर पाता। जारवा जनजाति की अपनी मौखिक भाषा है जिसे 'जारवा भाषा' कहा जाता है। यह किसी अन्य भाषा से संबद्ध नहीं मानी जाती और अत्यंत दुर्लभ है। इसका कोई लिखित रूप नहीं है। इनकी संस्कृति में लोकगीत और नृत्य विशेष महत्व रखते हैं। उत्सवों, शिकार के बाद, या खुशी के अवसरों पर सामूहिक नृत्य करते हैं। शरीर की थापों और मौखिक ध्वनियों से संगीत रचते हैं।

जारवा समाज सामूहिक और सहयोगात्मक होता है। ये लोग छोटे समूहों में रहते हैं और सभी कार्य सामूहिक रूप से करते हैं। कोई औपचारिक मुखिया नहीं होता, लेकिन बुजुर्गों को सम्मान प्राप्त होता है। इनकी विवाह पद्धति सरल होती है। विवाह सामुदायिक सहमति से होता है। बहुपत्नी विवाह या बाल विवाह जैसी कुप्रथाएँ इनमें नहीं पाई जाती। जारवा जनजाति लंबे समय तक बाहरी दुनिया से कटे रहे, लेकिन हाल के दशकों में अंडमान ट्रंक रोड के कारण इनके क्षेत्र में बाहरी लोगों की आवाजाही बढ़ी है। इससे इन्हें कई समस्याओं का सामना करना पड़ा जैसे- संक्रमण और बीमारियाँ, भूमि और संसाधनों पर अतिक्रमण और सांस्कृतिक क्षरण का खतरा इत्यादि। भारत सरकार ने इन्हें "अनुसूचित जनजाति" घोषित किया है और इनके संरक्षण के लिए "जारवा रिजर्व" क्षेत्र घोषित किया गया है, जहाँ आम लोगों का प्रवेश प्रतिबंधित है। ताकि इनकी जनसंख्या को सुरक्षित किया जा सके। जारवा जनजाति एक 'संकटग्रस्त समुदाय' है। इनकी जीवनशैली और संस्कृति को बचाने के लिए सरकार ने कई नीतियाँ बनाई हैं, जैसे- बाहरी संपर्क को न्यूनतम करना, स्वास्थ्य सेवाएँ पहुंचाना लेकिन संपर्क सीमित रखना, अनधिकृत पर्यटन पर रोक तथा उनकी संस्कृति और आत्मनिर्भरता को सम्मान देना आदि।

'सेंटीनेली' जनजाति भारत के अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में निवास करने वाली एक अत्यंत रहस्यमय और विश्व की सबसे अलग-थलग रहने वाली जनजातियों में से एक है। ये जनजाति 'नॉर्थ सेंटिनल द्वीप' पर निवास करती है, और आधुनिक सभ्यता से पूरी तरह से कटे हुए जीवन की मिसाल प्रस्तुत करती है। इनके बारे में जानकारी अत्यंत सीमित है, क्योंकि ये बाहरी संपर्क को सख्ती से अस्वीकार करते हैं और अपने क्षेत्र में किसी भी बाहरी व्यक्ति के प्रवेश पर आक्रामक प्रतिक्रिया देते हैं। नॉर्थ सेंटिनल द्वीप बंगाल की खाड़ी में स्थित है और अंडमान द्वीपसमूह का हिस्सा है। यह लगभग 60 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैला हुआ है और घने जंगलों से आच्छादित है। सेंटिनेली जनजाति को 'नेओलिथिक' युग का प्रतिनिधि माना जाता है, जिसका अर्थ है कि ये अभी भी पत्थर युग की जीवन शैली अपनाए हुए हैं। इतिहासकारों का मानना है कि ये लोग लगभग 60,000 वर्षों से इस द्वीप पर निवास कर रहे हैं। 'सेंटीनेली' जनजाति लकड़ी, पत्तों और शाखाओं से बनी झोपड़ियों में निवास करती है। इनकी बस्तियाँ जंगलों के भीतर स्थित होती हैं और समुद्र तट से कुछ दूरी पर होती हैं। सेंटिनेली जनजाति का जीवन पूर्णतः प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित है। वे शिकारी-संग्राहक होते हैं और कृषि नहीं करते। इनका मुख्य भोजन जंगली फल, कंद, शहद, मछलियाँ, सूअर, और कछुए आदि हैं। ये तीर-कमान से शिकार करते हैं और समुद्र में मछली पकड़ते हैं। इनके औजार मुख्यतः पत्थर, लकड़ी और हड्डियों से बने होते हैं। तीर-कमान, भाला, और काटने वाले उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। ये लोग वस्त्र नहीं पहनते या बहुत ही सीमित मात्रा में प्राकृतिक साधनों से अपने शरीर को ढकते हैं। शरीर पर आभूषण नहीं होते, परंतु कभी-कभी इनके शरीर पर बांस या लकड़ी से बने गेहने या अन्य चिह्न पहने जाते हैं। सेंटिनेली समाज की संरचना पर कोई पक्की जानकारी उपलब्ध नहीं है, परंतु अनुमानतः इनका समाज कबीलाई और सामूहिक जीवन पर आधारित होता है। वे छोटे-छोटे समूहों में रहते हैं। समूह का नेतृत्व संभवतः सबसे अनुभवी या बुजुर्ग सदस्य करता है। विवाह संबंधों और लैंगिक भूमिकाओं के बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं है, परंतु सामान्यतया पुरुष शिकार और सुरक्षा का कार्य करते हैं और महिलाएँ भोजन एकत्रित करने तथा बच्चों की देखभाल में लगी होती हैं। सेंटिनेली जनजाति की संस्कृति उनके पारंपरिक रहन-सहन, विश्वासों और

व्यवहार से प्रकट होती है। हालांकि सीधा संपर्क न होने के कारण इसकी जानकारी सीमित है। सेंटनेली जनजाति की अपनी अलग भाषा है, जिसे अब तक पूरी तरह समझा नहीं जा सका है। यह अंडमानी भाषाओं से भी भिन्न है। इनके धार्मिक विश्वास रहस्यमय हैं, लेकिन संभवतः ये प्रकृति पूजा करते हैं। सूर्य, समुद्र, पेड़-पौधों को पूजनीय मानते होंगे। कोई प्रत्यक्ष धार्मिक अनुष्ठान नहीं देखा गया है, लेकिन उनके व्यवहारों में सामूहिकता और किसी अनुशासन का पालन स्पष्ट दिखाई देता है। चित्रकला या शिल्पकला के प्रमाण नहीं मिले हैं, परंतु उनके तीर-कमान और अन्य उपकरणों में सुंदरता और उपयोगिता का सम्मिलन देखने को मिलता है। सेंटनेली जनजाति बाहरी संपर्क को पूरी तरह नकारती रही है। 1970 और 1990 के दशकों में भारतीय प्रशासन ने संपर्क की कोशिश की, जिसमें कभी-कभार वे बाहर आए, लेकिन ज्यादातर मौकों पर उन्होंने आक्रामकता दिखाई। 2006 में जब दो मछुआरे गलती से उनके द्वीप के पास चले गए, तो उन्हें मार दिया गया। 2018 में अमेरिकी मिशनरी जॉन एलेन चौ की हत्या ने फिर इस जनजाति को वैश्विक ध्यान में ला दिया। भारत सरकार ने इस जनजाति की सुरक्षा और उनके जीवन के संरक्षण हेतु नॉर्थ सेंटनेल द्वीप को 'प्रवेश निषिद्ध क्षेत्र' घोषित कर रखा है। वहाँ किसी भी बाहरी व्यक्ति के प्रवेश पर पूर्ण प्रतिबंध है। भारतीय संविधान के तहत सेंटनेली जनजाति को संरक्षित जनजाति घोषित किया गया है। अंडमान और निकोबार द्वीप (आदिवासी संरक्षण) विनियम, 1956 के तहत इन्हें कानूनी सुरक्षा प्राप्त है। भारत सरकार का दृष्टिकोण 'नो-कॉन्टैक्ट' पर आधारित है, जिससे उनकी जीवनशैली में बाहरी हस्तक्षेप न हो। इन्हें अपने पारंपरिक क्षेत्र में स्वतंत्रता से रहने का अधिकार प्राप्त है। इनकी संस्कृति और परंपरा को नष्ट होने से बचाने के लिए वैज्ञानिक और सामाजिक दृष्टिकोण से सतर्कता बरती जा रही है।

'शोम्पेन जनजाति' एक अत्यंत अल्पज्ञात, सीमित जनसंख्या वाली और मुख्यधारा से पूर्णतः अलग-थलग रहने वाली आदिम जनजाति है। यह जनजाति मुख्यतः ग्रेट निकोबार द्वीप पर पाई जाती है। शोम्पेन जनजाति को भारत सरकार ने **'विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह'** के रूप में वर्गीकृत किया है। शोम्पेन जनजाति निकोबार द्वीप समूह के सबसे बड़े द्वीप **ग्रेट निकोबार** में निवास करती है। इनका निवास क्षेत्र मुख्यतः **इन्द्रा पॉइंट** से लेकर **गालाथिया नदी** तक फैला हुआ है। इनकी कुल जनसंख्या अत्यंत सीमित है और यह लगभग 250-300 के आसपास है (आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार)। यह जनजाति सघन वन क्षेत्रों में रहती है और बाहरी दुनिया से संपर्क रखने से कतराती है। शोम्पेन लोग स्थायी बस्तियों में नहीं रहते। वे **अर्ध-घुमंतू जीवन** जीते हैं। ये लोग जंगलों के भीतर बांस, लकड़ी और पत्तों से बनी झोपड़ियों में रहते हैं। वर्षा ऋतु में वे ऊँचे और सुरक्षित स्थानों पर अस्थायी झोपड़ियाँ बनाते हैं। शोम्पेन जनजाति मुख्यतः शिकार, मछली पकड़ने, कंद-मूल और फल पर निर्भर रहती है। वे धनुष-बाण और भाले का उपयोग कर सूअर, पक्षियों और छोटे जानवरों का शिकार करते हैं। उनका भोजन पूर्णतः प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित होता है। वे धान या गेहूँ नहीं उगाते, किंतु कुछ क्षेत्रों में उन्होंने सीमित कृषि करना शुरू किया है जैसे केला, नारियल, हल्दी आदि की खेती। शोम्पेन लोगों के वस्त्र अत्यंत सीमित होते हैं। महिलाएँ आमतौर पर पेड़ों की छाल, घास या सूती कपड़ों से बनी स्कर्ट पहनती हैं जबकि पुरुष कमर में कपड़ा या छाल लपेटते हैं। शरीर पर गहनों के स्थान पर वे कंकड़, सीप, हड्डियों और लकड़ी से बने सजावटी तत्व पहनते हैं। शरीर पर टैट बनवाने की भी परंपरा पाई जाती है। शोम्पेन जनजाति की अपनी विशिष्ट भाषा है, जिसे "शोम्पेन भाषा" कहा जाता है। यह भाषा म्यांमार की कुछ जनजातीय भाषाओं से मिलती-जुलती है, लेकिन अभी तक पूरी तरह से अध्ययन नहीं किया गया है। इनकी भाषा

कोई लिपि नहीं है और यह मौखिक परंपरा पर आधारित है। भाषा के संरक्षण को लेकर सरकार और भाषाविदों द्वारा कुछ प्रयास किए जा रहे हैं। शोम्पेन समाज आदिम सामूहिकता पर आधारित है। इनमें कबीलाई संरचना पाई जाती है। उनका समाज पुरुष प्रधान होता है और पारंपरिक मुखिया प्रणाली चलन में है। विवाह संबंधों में बहुपति प्रथा (polyandry) या बहुपत्नी प्रथा (polygyny) के भी संकेत कुछ अध्ययनों में मिलते हैं। परिवारों में सहयोग की भावना बहुत प्रबल होती है। एक-दूसरे के बच्चों का पालन-पोषण सामूहिक रूप से किया जाता है। शोम्पेन लोग प्राकृतिक शक्तियों में गहन विश्वास रखते हैं। वे वृक्ष, नदी, सूर्य, चंद्रमा और अग्नि को पूजनीय मानते हैं। कोई संगठित धर्म नहीं है, लेकिन उनकी मान्यताएँ एनिमिज्म (Animism) पर आधारित हैं। ये आत्मा, भूत-प्रेत, और वनदेवताओं में विश्वास रखते हैं और बीमारियों का इलाज झाड़ू-फूँक या परंपरागत जड़ी-बटियों से करते हैं। शोम्पेन समाज में पारंपरिक **नृत्य और लोकगीत** की परंपरा है। उत्सवों में सामूहिक नृत्य किया जाता है। वे पेड़ों की लकड़ी और जानवरों की खाल से बने वाद्ययंत्रों का उपयोग करते हैं। शोम्पेन जनजाति वर्षा, शिकार या फसल की प्राप्ति के अवसर पर छोटे स्तर पर **अनुष्ठान और उत्सव** मनाते हैं। ये उत्सव पूरे समुदाय को एक सत्र में बाँधते हैं। शोम्पेन जनजाति आज **विलुप्ति के संकट** से जूझ रही है। उनकी परंपरागत जीवनशैली को बाहरी संपर्क, पर्यटन, सड़क निर्माण, बीमारियाँ, सांस्कृतिक क्षरण, विकास परियोजनाओं से विस्थापन, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी और पर्यावरणीय बदलावों ने प्रभावित किया है। हालांकि सरकार द्वारा संरक्षित क्षेत्र अधिनियम, विकास प्रतिबंध, और आरोग्य सेवाओं के कुछ प्रयास किए गए हैं, लेकिन उनकी सफलता सीमित रही है क्योंकि शोम्पेन समुदाय बाहरी हस्तक्षेप को सहजता से स्वीकार नहीं करता। भारत सरकार ने शोम्पेन जनजाति के संरक्षण के लिए कई कदम उठाए हैं, जैसे- शोम्पेन हब क्षेत्र को प्रतिबंधित क्षेत्र घोषित करना, संपर्क रहित विकास नीति अपनाना, स्वास्थ्य सेवाओं की मोबाइल इकाइयों का संचालन, जनसंख्या और स्वास्थ्य का नियमित सर्वेक्षण इत्यादि। परंतु इन प्रयासों में सांस्कृतिक संवेदनशीलता और स्थानीय सहभागिता बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। **'निकोबारी जनजाति'** के लोग निकोबार द्वीप समूह में बसी हुई हैं और इनकी जीवनशैली, संस्कृति, रीति-रिवाज, और सामाजिक संरचना इन्हें विशिष्ट बनाती है। भारत सरकार द्वारा इन्हें अनुसूचित जनजाति के अंतर्गत रखा गया है। निकोबारी जनजाति की संस्कृति प्राकृतिक परिवेश, सामाजिक सहयोग और पारंपरिक आस्थाओं पर आधारित है। इनकी संस्कृति भारतीय आदिवासी जीवन का एक प्राचीन और जीवंत रूप प्रस्तुत करती है। निकोबारी जनजातियाँ मुख्यतः नारकोडम, लिटिल निकोबार, कार निकोबार, ग्रेट निकोबार, कैमोर्टा, कोडुल और चौरा द्वीपों में निवास करती हैं। इनमें सबसे अधिक आबादी कार निकोबार द्वीप में है। 2011 की जनगणना के अनुसार निकोबार द्वीपों की कुल जनसंख्या में निकोबारी जनजातियों की संख्या लगभग 30,000 के आसपास थी। निकोबारी लोग पारंपरिक झोपड़ीनुमा घरों में रहते हैं जिन्हें "मचानों" पर बनाया जाता है। ये घर बांस, लकड़ी और पत्तों से बने होते हैं तथा ज़मीन से कुछ ऊँचाई पर बने होते हैं ताकि वर्षा जल और कीटों से सुरक्षा मिल सके। घर गोल या अष्टकोणीय आकार में होते हैं और छत पाम या नारियल की पत्तियों से बनी होती है। इनका मुख्य भोजन नारियल, केला, मछली, सूअर और समुद्री जीव-जंतु होते हैं। चावल इनकी भोजन व्यवस्था में बाद में शामिल हुआ। भोजन सामूहिक रूप से तैयार किया जाता है और अधिकांशतः उबालकर या आग में भूनकर खाया जाता

है। पुरुष प्रायः लुंगी या धोती पहनते हैं, जबकि महिलाएँ लंबी स्कर्ट और ब्लाउज पहनती हैं। आधुनिकता के प्रभाव से अब कुछ लोग पश्चिमी परिधान भी पहनने लगे हैं, लेकिन पारंपरिक परिधान आज भी उत्सवों व अनुष्ठानों में पहने जाते हैं। निकोबारी समाज में **मुखिया प्रणाली** प्रचलित है। गाँव के मुखिया को “Captain” कहा जाता है और यह प्रशासनिक एवं सामाजिक मामलों का नेतृत्व करता है। उनके सामाजिक जीवन में **विवाह, जन्म, मृत्यु और त्यौहार** सामूहिक रूप से मनाए जाते हैं। निकोबारी जनजातियों की धार्मिक आस्थाएँ प्राचीन प्रकृतिपूजक विश्वासों पर आधारित रही हैं। हालांकि वर्तमान में ईसाई धर्म (मुख्यतः कैथोलिक) का प्रभाव बहुत व्यापक है। ये लोग मुख्यतः आत्मा और पुनर्जन्म, समुद्र, जंगल, सूर्य और चंद्रमा की पूजा, **टोना-टोटका और भूत-प्रेत** की अवधारणा पर यकीन रखते हैं। 20वीं शताब्दी में मिशनरियों के माध्यम से ईसाई धर्म का प्रवेश हुआ और आज अधिकांश निकोबारी जनजाति ईसाई धर्म मानती है। चर्च इनकी सामाजिक संरचना का एक हिस्सा बन चुका है। इनका सबसे प्रमुख त्यौहार “**पिग फेस्ट**” (सूअर उत्सव) है। यह एक पारंपरिक त्यौहार है जिसमें समुदाय के लोग मिलकर सूअर का पालन करते हैं और सामूहिक भोज का आयोजन होता है। यह उत्सव समूह की एकता और सहयोग का प्रतीक है। अन्य उत्सवों में ईसाई धर्म के त्यौहार जैसे क्रिसमस और ईस्टर भी पूरे उल्लास से मनाए जाते हैं। निकोबारी जनजाति के लोग बांस और लकड़ी से वस्तुएँ बनाते हैं। उनके हस्तशिल्प में नाव बनाना, टोकरी बुनाई और हथियार निर्माण की कला देखने को मिलती है। महिलाएँ पारंपरिक बुनाई में पारंगत होती हैं और चटाइयाँ, टोकरियाँ और झोले बनाती हैं। हाल के वर्षों में शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं के विकास से निकोबारी समाज में परिवर्तन आया है। अंग्रेजी और हिंदी दोनों भाषाएँ विद्यालयों में पढ़ाई जाती हैं। हालांकि, 2004 की सुनामी के बाद इस जनजाति को भारी नुकसान झेलना पड़ा था, जिससे इनकी सामाजिक और आर्थिक संरचना प्रभावित हुई। सरकार द्वारा पुनर्वास कार्यक्रमों से सुधार आया है। निकोबारी लोग निकोबारी भाषा बोलते हैं, जो ऑस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवार से संबंधित है। इसमें कई स्थानीय उपभाषाएँ हैं। भारत सरकार द्वारा निकोबारी जनजातियों के लिए विशेष योजनाएँ लागू की गई हैं जैसे- जनजातीय विकास परियोजनाएँ, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार, पारंपरिक संस्कृति के संरक्षण हेतु शोध एवं प्रलेखन कार्यक्रम।

अंडमान की जनजातियाँ मानव जाति की आदिम जीवनशैली और संस्कृति की जीवित मिसाल हैं। इनका अस्तित्व हमें यह याद दिलाता है कि प्रकृति के साथ संतुलन बनाकर भी जीवन जिया जा सकता है। इन जनजातियों का संरक्षण केवल मानवविज्ञान की दृष्टि से नहीं, बल्कि नैतिक और सांस्कृतिक उत्तरदायित्व भी है। हमें इनके जीवन में हस्तक्षेप के बजाय, इनके अधिकारों और स्वतंत्रता का सम्मान करते हुए संरक्षण करना चाहिए।

नोट:- यह आलेख साक्षात्कार और अंतरजाल से मिली जानकारी पर आधारित है।

सामाजिक-आर्थिक विकास पर इंदिरा आवास योजना की भूमिका का अध्ययन

मुकेश वर्मा¹

शोधार्थी, अर्थशास्त्र विभाग
एम०बी० जी० पी०जी० कालेज
हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड।

डॉ० रीन रानी मिश्रा²

प्रोफेसर अर्थशास्त्र विभाग
एम०बी० जी० पी०जी०
कालेजहल्द्वानी, नैनीताल,
उत्तराखण्ड।

सारांश-

वर्तमान समय में केन्द्र तथा राज्य सरकारों के द्वारा विभिन्न प्रकार की योजनायें चलायी जा रही हैं। प्रस्तुत शोध पत्र “सामाजिक-आर्थिक स्थिति विकास पर इंदिरा आवास योजना की भूमिका का अध्ययन” को समस्या के रूप में लिया गया है, जिसके लिये वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया एवं शोध न्यादर्श के रूप में 100 लाभार्थियों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया। शोध कार्य से सम्बंधित आकड़ों के संकलन के लिये स्व:निर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। निष्कर्ष रूप में पाया गया कि सामाजिक-आर्थिक स्थिति विकास पर इंदिरा आवास योजना के माध्यम से आवास प्राप्त होने के पश्चात् उनकी सामाजिक-आर्थिक विकास में काफी सुधार हुआ है।

प्रमुख शब्द:- इंदिरा आवास योजना, सामाजिक-आर्थिक विकास।

प्रस्तावना
प्रकृति के प्रांगण में आवास या घर मनुष्य की महत्वपूर्ण अहम आवश्यकताओं में से एक है। बहुत समय पहले गौतम बुद्ध जी ने कहा था कि “आवास के बिना मनुष्य का भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से पूर्ण विकास नहीं हो सकता है।” इस प्रकार आवास, मानव के विकास और स्थायित्व का अभिन्न अंग है। मानव के लिए आवास या घर एक बुनियादी आवश्यकता है। एक सामान्य नागरिक, जिसके पास अपना आवास या घर है अर्थात् उसके पास सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक सुरक्षा तथा सम्मानजनक दर्जा प्राप्त होता है। बिना आवास या घर के आदमी के लिए एक मकान उसके अस्तित्व में आमूल-चूक परिवर्तन लाता है, उसे एक पहचान दिलाता है, जिससे वह अपने आस-पास के सामाजिक परिवेश के साथ जुड़ जाता है।

समाज में रहने वाले अनेक न्यूनतम-आय-वर्ग के लोगों के जीवन-स्तर में गुणात्मक सुधार लाने के सन्दर्भ में आर्थिक विकास का अर्थ है उनके विकास क्रम को आत्म-पोषित बनाना, भूख और निर्धनता से छुटकारा दिलाना तथा रहने के लिए एक आवास या घर उपलब्ध कराना। परिवार के सिर पर एक छत का होना जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। आवास न सिर्फ रहने के लिए बल्कि सुरक्षा की दृष्टि से मनुष्य के सम्मान के साथ भी जुड़ा हुआ है। भारत में पंचवर्षीय योजनाओं का लक्ष्य और सामाजिक उद्देश्य के अन्तर्गत सार्वजनिक और निजी क्षेत्र को एक-दूसरे के पूरक रूप में देखा जाता है। निजी क्षेत्र में संगठित उद्योग, लघु उद्योग, कृषि, व्यापार और गृह निर्माण तथा संबद्ध क्षेत्र शामिल हैं। विकास के राष्ट्रीय प्रयास में व्यक्तिगत कोशिश और निजी पहल को आवश्यक और वांछित माना जाता है और इसके साथ ही साथ अधिकतम स्वैच्छिक सहयोग को भी अनिवार्य समझा जाता है। देश के प्राकृतिक संसाधनों के प्रभावी दोहन, उत्पादन, वृद्धि और समाज के हित में सभी के लिए